हमारी स्वायत्तता के पहरेदार

कभी-कभी हमारे समाज के जटिल ताने-बाने को समझना बहुत मुश्किल लगता है। इसकी तुलना अगर सड़क की लाल बत्ती पर खड़े या उसे पार करने वाली बाइक या कारों से की जाए, तो यह गलत नहीं होगा। इन वाहन चालकों का नियमों को ताक पर रखकर निकल जाना एक आम भारतीय नागरिक की पहचान सा बन गया है। कुछ अधिक गहराई से देखें, तो यह समस्या बड़े विकराल रूप में हमारे समाज को खाए जा रही है।नियमों का पालन मुश्किल भी है और अति सरल भी है। नियमों के पालन में दो तथ्य काम करते हैं। पहला, नियम से संबंधित हमारा कर्म और दूसरा उस नियम-विशेष की व्याख्या करने के प्रति हमारा दृष्टिकोण।

अगर हम पहले तथ्य को लेकर चलें, तो लाल बत्ती पर रुकना एक सामान्य सी बात लगेगी। ऐसा करके हम उस नियम या उसके पीछे की भावना को स्वीकार कर लेते हैं। सामान्यतः नागरिकों से यही उम्मीद की जाती है कि वे नियमों के पीछे की भावना को परोक्ष रखकर बस नियमों का पालन करें। ऐसी उम्मीद रखना अलग बात है और व्यावहारिक स्तर पर उनका पालन करना अलग बात है। अधिकांशतः जब भी कोई वाहन लाल बत्ती को पार करता है, तो इसके पीछे उसके अंतःकरण में उस नियम के पीछे छिपी भावना की अपनी व्याख्या चल रही होती है। वह वाहनचालक यह मानकर चलता है कि लाल बत्ती पर अगर दूसरी ओर से वाहनों का आवागमन नहीं हो रहा है, तो वह उसे पार करने की छूट ले सकता है। उसकी नज़र में यह नियम वाहनों की आवाजाही के दौरान के लिए बनाया गया है। इस समय में वह वाहनचालक एक स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने वाले ऐसे व्यक्ति की तरह व्यवहार कर रहा होता है, जो यह महसूस करता है कि उस विशेष परिस्थिति में वह समाज या सरकार द्वारा बनाए गए नियमों का नियंत्रण अपने हाथों में लेने के लिए स्वतंत्र है। नियमों को ताक पर रखने वाले लोगों का एक समूह ऐसा भी है, जो यह सोचता है कि हम नियमों का पालन करने के लिए बाध्य ही नहीं हैं।

हमारे समाज में नियमों के पालन को लेकर आज जो यह मनमानी चल रही है, वही सारे विवादों की जड़ है। यह समझना मुश्किल है कि हम समाज के बनाए नियमों का अंधानुकरण करें या उनका पालन अपने दृष्टिकोण के अनुसार करें ? कभी-कभी लगता है कि सामाजिक रीत से

अलग अपना व्यक्तिगत दृष्टिकोण श्रेयस्कर है। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि सामाजिक नियमों की व्यक्तिगत व्याख्या ही सारे विवादों को जन्म दे रही है। यही कारण है कि समाज में जगह-जगह 'ट्रैफिक जाम' जैसी स्थिति बनी हुई है। ये व्यक्तिगत दृष्टिकोण ही कहीं-न-कहीं आगे जाकर भ्रष्टाचार को वैध बना देते है, और यही पहचान राजनीति के झंडे तले आए दिन अनेक विवाद खड़े करती रहती हैं।

फिल्म "पद्मावती" की शूटिंग पर बवाल, जल्लीकट्टू पर विवाद ऐसे कुछ उदाहरण हैं, जो धर्म, परंपरा और राष्ट्रहित पर व्यक्तिगत दृष्टिकोण रखने वाले लोगों की देन हैं। पहचान की ऐसी राजनीति, ट्रैफिक सिग्नल पर नियम तोड़ने वालों की सोच से कुछ अलग नहीं है।दरअसल, पहचान तो नियमों और उनका पालन करने के हमारे तरीके से बनती है। धर्म, जाति और लिंग से जुड़ी पहचान समाज के एक बड़े वर्ग के प्रतिमानों से तय होती है, और अधिकांशतः इन प्रतिमानों पर खरे उतरने की हमारी समझ ही सामाजीकरण है। हमारी धार्मिक और जातिगत पहचान के अनुसार हमारा व्यवहार समाज के परोक्ष और प्रत्यक्ष नियमों से ही संचालित होता है। समाज में रहने का गहरा संबंध सामाजिक नियमों के पालन से है। यानि कि समाज की लाल बत्तियों पर आवश्यकतानुसार रुकने से है।

चूंकि व्यक्ति की पहचान का मामला व्यक्तिगत होता है, इसलिए हम आसानी से समाज की लाल बत्तियों को पार करके नियमों का उल्लंघन करते जाते हैं। साथ ही अपनी व्यक्तिगत निर्णयात्मक क्षमता का बलपूर्वक समर्थन भी करते हैं। हमारे व्यक्तित्व की यही पहचान हमारी स्वायत्तता है, जिसका होना हमारे लिए हर्ष और गौरव की बात है। वर्तमान में समाज के छोटे-छोटे समूह, जो हमारी पहचान की व्याख्या करने के अधिकार का दम भरते हैं, हमारी स्वायत्तता पर लगातार आघात किए जा रहे हैं।

वर्तमान परिदृश्य में किसी धर्म, जाति या समुदाय से संबंधित होना आसान नहीं है, क्योंकि हमारे इस संबंध को चुनौतियां दी जा रही हैं। अगर आप सोचते है कि भारतीय होना तो सामान्य सा अधिकार है, तो दुबारा इस पर विचार करें, क्योंकि सत्तारूढ़ सरकार की नीतियों के खिलाफ आवाज़ उठाने, सिनेमाघरों में राष्ट्रगान के प्रयोग पर प्रश्न लगाने, एबीवीपी के विरूद्ध सोशल नेटवर्क पर पोस्ट भेजने और यहाँ तक कि आपको यह सोचने का भी अधिकार नहीं है कि पाकिस्तान में कुछ उदार लोग रहते हैं। हम धीरे-धीरे अपने आप को परिभाषित करने अपनी पहचान का परिचय देने और अपनी पहचान को निर्धारित करने की पसंद की स्वायत्तता को खोते जा रहे हैं।हाल ही में जल्लीकट्टू विवाद में सांडों की लड़ाई का विवाद मुद्दा कम और तमिल होने का ज्यादा था। जल्लीकट्टू के विरोध में लिखने वालों को तमिलद्रोही करार दिया गया।

जल्लीकट्टू का समर्थन करने वाली अनेक बड़ी हस्तियों ने इसे तमिल होने का आधार माना। तमिल होने की शायद यह नई परिभाषा सामने आई। इस प्रकार के सभी मामलों में समाज का एक छोटा वर्ग लिप्त होता है, जो हमारी पहचान के नियमों की व्याख्या करने लग जाता है। जो काम पहले सरकारें और समाज का एक विशाल वर्ग किया करता था, उसे करने के लिए इन छोटे समूहों ने अपने आपको अभिषिक्त कर लिया है। इस पहचान को लोगों पर थोपना वे अपना उत्तरदायित्व समझने लगे हैं। यह बिल्कुल वैसा ही है, जैसे किसी लाल बत्ती पर कुछ लोगों का समूह उन लोगों को पकड़ने के लिए खड़ा हो जाए, जो इसे गैरकानूनी तरीके से पार करते हैं।

आज हम इस मुकाम पर इसलिए पहुँच गए हैं, क्योंकि जो लोग अर्थपूर्ण सामाजिक नियमों के निर्माण और संरक्षण के लिए पदासीन किए गए थे, वे अपने इस उत्तरदायित्व से मुँह मोड़ चुके हैं। जैसे ट्रैफिक पुलिस की अनुपस्थिति में अचानक कोई व्यक्ति यातायात नियंत्रण का बीड़ा उठा लेता है, वैसे ही नेताओं की निष्क्रियता के कारण इन छोटे-छोटे समूहों ने समाज को नियंत्रित करने का बीड़ा उठा लिया है।

ऐसा लगता है कि जैसे यह प्रजातांत्रिक राजनीति की मूल प्रकृति का परिणाम है। प्रतिनिधित्व की राजनीति एक ऐसा तंत्र है, जिसमें हम स्वयं अपनी स्वायत्तता अपने प्रतिनिधियों को सौंप देते हैं। मतदान के द्वारा हम अपने ऐवज में किसी और को बोलने और शासन करने के लिए 'पावर ऑफ अटार्नी' देते हैं। हम स्वेच्छा से राजनेताओं को शासन का अधिकार इस उम्मीद में दे देते हैं कि वे सही मार्ग चुनेंगे। ऐसी उम्मीद अब विश्व के किसी भी प्रजातंत्र से नहीं रखी जा सकती।

प्रजातंत्र एक ऐसा अनुबंध है, जिस पर हम अपने चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा बनाए नियमों के पालन के लिए खुशी से हस्ताक्षर करते हैं। इस अनुबंध के दूसरे पहलू में राजनेता नागरिकों के हितों को ध्यान में रखते हुए नियम बनाते हैं और उनमें निहित भावनाओं को खुले शब्दों में जनता को बताते हैं। जब इन नियमों में अस्पष्टता होती है या आती है, तभी सामाजिक विवाद पनपते हैं, क्योंकि अलग-अलग समुदाय और व्यक्ति अपनी सोच के आधार पर इनकी व्याख्या करते हैं। इस तरह प्रजातंत्र नाम का अनुबंध विफल हो जाता है।

विफलता की यह चोट तब ऊभरकर सामने आती है, जब अनिर्वाचित लोग समाज को प्रजातांत्रिक नियमों के आधार पर नहीं, बल्कि अपने बनाए नियमों के आधार पर चलाने का प्रयत्न करने लगते हैं। फिर वे समाज में उसी तरह की उच्छृंखलता करते हैं, जैसे वे लाल बत्ती को गैरकानूनी तरीके से पार करके करते हैं और हम सब असहाय से होकर बत्ती का रंग हरा होने का इंतजार करते रहते हैं।

'द हिंदू' में प्रकाशित सुंदर सरूक्कई के लेख पर आधारित।